Topic- uttar Vaidik ke social

Dr. Preeti Ranjan
Assistant professor
H·D Jain College (Ara)

B·A Part – I Topic-uttar Vaidik
Dharmik sthi.

उत्तर वैदिक धर्म

उत्तरवैदिक काल के प्रारंभ में धर्म का उद्देश्य ऋग्वैदिक रहा अर्थात् भौतिक सुखों की प्राप्ति। इन्द्र और वरुण का महत्व कम गया। प्रजापति स्थापित हो गये। प्रजापति को हिरण्यगर्भ कहा गया। विष्णु और रुद्र भी महत्वपूर्ण देवता हो गए। पूषण अब शूद्रों के देवता हो गए। अथर्ववेद में लोकधर्म की चर्चा मिलती है। इन्द्र को नागों और राक्षसों का वध करने कहा गया।

अश्विन अब कृषि रक्षक हो गए। सावित्र - नए मकान बनाने वाले देव उपासना की विधि - उत्तर वैदिक काल में प्रार्थना की जगह यज्ञ महत्वपूर्ण हो गया। पशु बलि दी जाती थी। यज्ञ के साथ अंधविश्वास बढ़ गया। शब्दों की जादुई शक्ति पर विश्वास किया जाने लगा। मंत्रोच्चारण की अशुद्धि अनिष्ट कर सकता था। मंत्रोच्चारण जानने के कारण ब्राह्मण महत्वपूर्ण हो गए। क्योंकि यज्ञ की विधि केवल ब्राह्मण ही जानते थे अतः कुछ बातों में ब्राह्मण देवता से भी अधिक शक्तिशाली हो गये।

एक तरफ कृषि संस्कृति का भी विकास हो रहा था। अतः बहुत बड़ी संख्या में पशुओं की आवश्यकता थी। अतः वैदिक यज्ञ पद्धति के विरुद्ध प्रतिक्रिया शुरू हुई। प्रथम धर्म सुधारक ऋषि दीर्घतमस को माना जा सकता है। उन्होंने यज्ञ का विरोध किया। अरण्यकों में यज्ञ से हटकर तप पर बल दिया गया। उत्तर वैदिक धर्म की आशावादिता लुप्त हो गई और पुनर्जन्म की अवधारणा बृहदारण्यक उपनिषद् में आई। उपनिषदों में मोक्ष की संकल्पना आई और ज्ञान पर बल दिया गया। आत्मा व परमात्मा के एकीकृत हो जाने की बात कही गई।

वर्ण एवं जाति

वर्ण मौलिक रूप से सामाजिक व्यवस्था थी क्योंकि यह आर्थिक कारणों से भी प्रभावित थी। जब वर्ण का आधार जन्म मूलक हो गया तब उसने जाति का रूप ले लिया। वर्ण कर्म मूलक था।

आश्रम व्यवस्था

ऋग्वैदिक काल में केवल तीन आश्रम ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वानप्रस्थ था। (छान्दोग्य उपनिषद) बुद्ध काल में आश्रम व्यवस्था स्थापित हो गई। जाबालोपनिषद में चारों आश्रम का उल्लेख है। आश्रम के दो उद्देश्य- 1) देव ऋण, ऋषि ऋण, पितृ ऋण, व मानव जाति के ऋण से मुक्त होना तथा 2. जीवन के चार पुरुषार्थ अर्थ, धर्म, काम एवं मोक्ष की प्राप्ति।

1. ब्रह्मचर्य - उपनयन के बाद ब्रह्मचर्य आश्रम में प्रवेश का बालक विद्याध्ययन करता। आश्वलायन के अनुसार ब्राह्मण का 8, क्षत्रिय का 11 व वैश्य को 12 वर्ष में उपनयन होता था।

2. गृहस्थ - समावर्तन (शिक्षा की समाप्ति) के बाद बालक गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता था। शूद्रों हेतु केवल गृहस्थाश्रम था। बौधायन और गौतम के अनुसार केवल एक गृहस्थाश्रम था।

3. वानप्रस्थ - आर्य अपने समाज से दूर (वन में) मनन चिंतन करता था।

4. सन्यास आश्रम - जीवन की सक्रिय गतिविधि से हट कर अपनी मन की स्थिति को मृत्यु हेतु बनाना।

संस्कार

जीवन के हर अवस्था के लिए संस्कार के विधान की कल्पना की गई। शूद्रों के संस्कार मंत्र हीन होते थे। स्त्रियों के विवाह संस्कार में मंत्रोच्चारण होता था। सामान्यतः 16 संस्कार हैं -

1. गर्भाधान - गर्भ धारण करना।
2. पुंसवन - पुत्र प्राप्ति हेतु मंत्रोच्चारण।
3. सीमन्तोनयन - गर्भ की रक्षा हेतु।
4. जातकर्म - जन्म के तत्काल बाद पिता द्वारा बच्चे को शहद घृत व शहद चखाया जाता।
5. नामकरण - जन्म के दसवें दिन। यज्ञवल्क्य - 11वें दिन।
6. निष्क्रमण - जन्म के चौथे सप्ताह पहली बार बच्चे को बाहर निकाला जाता था।
7. अन्नप्राशन - छठे महीने में बच्चे को अन्न खिलाया जाता था।
8. कर्णछेद - जन्म के छठे - सातवें महीने में।
9. चूड़ाकर्म - तीन वर्ष की अवधि में बालक का मुंडन।

10. विद्यारम्भ - घरेलु विद्या की शुरुआत।
11. उपनयन - ब्राह्मण हेतु 8 वर्ष क्षत्रिय हेतु 11 वर्ष, वैश्य हेतु 12 वर्ष।
12. वेदारम्भ - गुरु के निर्देशन में वैदिक शिक्षा।
13. केशान्त - 16 वर्ष की आयु में दाढ़ी- मूँछ बनवायी- जाती थी।
14. समावर्तन - अध्ययन की समाप्ति के बाद-
15. विवाह संस्कार -
16. अंत्येष्टि संस्कार -

पंच महायज्ञ

1. ब्रह्म यज्ञ - ब्राह्मणों एवं श्रमणों के प्रति श्रद्धा।
2. देव यज्ञ - देवताओं के प्रति कृतज्ञता
3. पितृ यज्ञ - पितरों के प्रति तर्पण।
4. नृयज्ञ - अतिथि सत्कार -
5. भूत यज्ञ - समस्त जीवों के प्रति कृतज्ञता।

वैदिक शिक्षा

ज्ञान के दो प्रकार थे - पराविद्या या आध्यात्मिक ज्ञान और अपराविद्या या लौकिक ज्ञान। लौकिक ज्ञान के साधन चार वेद एवं छः वेदांग माने गये हैं। चार वेद- ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद थे। छः वेदांग- शिक्षा (स्वर विज्ञान), कल्प (कर्मकांड) व्याकरण, निरुक्त छंद और ज्योतिष थे।